भारत में भाषा–चिंतन की परम्पराएँ

राष्ट्रीय वेबिनार

12–14 जनवरी 2021

महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा एवं विद्याश्री न्यास के संयुक्त तत्वावधान में 'भारत में भाषा–चिंतन की परम्पराएँ' विषय पर राष्ट्रीय वेबिनार का उद्घाटन मुख्य अतिथि प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल, कुलपति, महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय एवं डॉ. दयानिधि मिश्र, सचिव, विद्याश्री न्यास द्वारा माँ सरस्वती एवं पं. विद्यानिवास मिश्र के चित्र पर माल्यार्पण, डॉ. जगदीश नारायण तिवारी के मंगलाचरण और डॉ. अरुणेश नीरन के स्वागत वाचन के साथ आभासी मंच पर सम्पन्न हुआ। वेबिनार के विषय की प्रस्तावना के क्रम में प्रतिकुलपति प्रो. हनुमान प्रसाद शुक्ल ने भाषा–चिंतन के विविध आयामों की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की। अपने बीज वक्तव्य में प्रो. दिलीप सिंह ने भाषा–चिंतन के विकास क्रम से परिचित कराया तथा इसके ऐतिहासिक पक्षों को वर्तमान से सम्बद्ध करते हुए इनकी प्रासंगिकता पर बल दिया। मुख्य अतिथि प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल ने अपने सम्बोधन में कहा कि भाषा वाक्यों का समूह है और व्याकरण शब्दानुशासन है। वाक्य–पक्ष में भाषा के भीतर अभिव्यक्ति और सम्प्रेषण की शक्तियों का आकलन मिलता है। उन्होंने हिन्दी भाषा के क्षेत्र में विश्वविद्यालय के योगदान का वर्णन करते हुए संगणकीय बनाम प्राकृतिक भाषा व इनके सामंजस्य पर बल दिया। इस क्रम में उन्होंने भाषा–चिंतन के क्षेत्र में पं. विद्यानिवास मिश्र सहित अनेक विद्वानों के योगदान की चर्चा की।

सत्र की अध्यक्षता कर रहे प्रो. उदय प्रताप सिंह ने भाषा–चिंतन के क्षेत्र में अब तक की प्रगति की समीक्षा करते हुए निरन्तर अनुसंधान की आवश्यकता पर बल दिया। सत्र के संचालन का दायित्व प्रो. अवधेश कुमार शुक्ल ने वहन किया तथा धन्यवाद–ज्ञापन डॉ. दयानिधि मिश्र ने किया।

'वेद–वेदांग में भाषा–चिंतन' विषयक प्रथम अकादमिक सत्र के आरम्भ में प्रो. विंध्येश्वरी प्रसाद मिश्र ने 'वैदिक वाङ्मय में वाक् तत्व' की चर्चा करते हुए बताया कि भारतीय चिंतन मूलतः वाक् केन्द्रित है। उसमें सम्पूर्ण सृष्टि को दैवीय काव्य के रूप में देखा गया है। वाक् के महत्व को प्रतिपादित करने वाले सूक्त प्राचीनतम वैदिक वाङ्मय से ही मिलने लगते हैं। 'औपनिषदिक भाषा वैशिष्ट्य' की व्याख्या करते हुए प्रो. गणेश ईश्वर भट्ट ने कहा कि संस्कृत भाषा का वास्तविक स्वरूप देखना चाहें तो उपनिषदों का अध्ययन करें। वास्तव में वेदों और उपनिषदों की भाषा ही संस्कृत है और वही अमरवाणी है। 'शिक्षा ग्रंथों में उच्चारण की व्यवस्था' के सन्दर्भ में प्रो. मुरली मनोहर पाठक ने बताया कि पद वाक्यों के घटक तथा वर्ण

पदों के घटक हैं। वर्ण नादात्मक होता है। ऋक्तन्त्र में कहा गया है कि जो व्यक्त रूप से ध्वनित हों, उन्हें वर्ण कहते हैं। प्रो. मनोज कुमार मिश्र ने 'निरुक्त के परिप्रेक्ष्य में निर्वचन और अर्थ विज्ञान' को विश्लेषित करते हुए निघण्टु का स्वरूप स्पष्ट किया तथा कहा कि निघण्टु एवं निरुक्त में अविनाभाव सम्बंध है। निरुक्त का सम्पूर्ण प्रासाद निघण्टु पर अवलम्बित है। अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. राममूर्ति चतुर्वेदी ने प्रतिशाख्यों में वर्ण और पद की रचना के रूप में भाषा की कतिपय विशेषताओं का विवेचन किया। वेद के शब्दस्वरूप एवं अर्थस्वरूप दोनों स्वरूपों की रक्षा करने के लिए तत्कालीन आचार्यों ने वेदांगों की रचना की जिन्हें क्रमशः शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष कहते हैं। इनमें समसंख्यांक वेदांग–कल्प, निरुक्त और ज्योतिष वेद के अन्तः कलेवर अर्थस्वरूप की रक्षा करते हैं तथा विषमसंख्यांक वेदांग–शिक्षा, व्याकरण और छन्द वेद के बाह्य कलेवर शब्दस्वरूप की रक्षा करते हैं। इस सत्र का संचालन एवं धन्यवाद–ज्ञापन डॉ. जगदीश नारायण तिवारी ने किया।

द्वितीय अकादमिक सत्र 'भाषा–चिंतन की दार्शनिक पृष्ठभूमि' के आरम्भ में प्रो. के.ई. धरणीधरन ने नैयायिक मत में 'शब्द प्रमाण और शाब्दबोध' की व्याख्या करते हुए कहा कि न्याय–दर्शन प्रमाण पर सर्वाधिक बल देता है। न्याय दर्शन अपने प्रमाण विचार की सूक्ष्म पद्धति से ही तत्त्वनिर्णय तक हमें ले जाने का प्रयत्न करता है और विरोधी मतों का खण्डन भी इसी के द्वारा करता है। न्याय दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान एवं शब्द चार प्रमाण हैं। पूर्वमीमांसा में भाषा–विज्ञान के प्रति अपनी दृष्टि से परिचित कराते प्रो. कमलाकान्त त्रिपाठी के अनुसार भाषा, निगद आदि शब्द अभिधा, लक्षणा आदि वृत्तियों के द्वारा अर्थविशेष के प्रतिपादक के रूप में प्रसिद्ध हैं। 'वर्ण एवं शब्द' इत्यादि अभियुक्त व्यवहार से यद्यपि भाषा आदि शब्द कहीं पर वर्ण मात्र के बोधक होते हैं तथापि निरर्थक वर्ण अर्थप्रतीति के जनक नहीं होने के कारण प्रयुक्त नहीं किये जाते, अतः अर्थप्रत्यायक भाषा वर्ण ही 'भाषा' या 'निगद' शब्दों के द्वारा व्यवहृत होते हैं। प्रस्थानत्रयी के आलोक में भाषा–चिंतन की प्रस्तुति करते हुए प्रो. सुधाकर मिश्र ने कहा कि कार्याकार्य, कर्त्तव्याकर्त्तव्य का भेदज्ञान ही विवेक है। गुण, क्रिया, जाति और सम्बंध के कारण ही पदार्थ निर्वचनीय होता है। इसीलिए कहा है– दृष्टा गुणक्रियाजातिः सम्बन्धा शब्दहेतवः। सांख्य दर्शन में शब्दार्थ विचार पर प्रकाश डालते हुए प्रो. कृष्णकांत शर्मा ने बताया कि शब्द और अर्थ दोनों ही भाषा के प्रमुख घटक हैं। अर्थ और शब्द का परस्पर वाच्य–वाचक भाव सम्बंध होता है। हम शब्द का उच्चारण अर्थ का बोध कराने के लिए करते हैं। प्रो. सच्चिदानन्द मिश्र ने नव्य न्याय में भाषा–दर्शन के स्वरूप के साथ ही इसकी पृष्ठभूमि, पाश्चात्य तथा भारतीय भाषा–दर्शन, भाषा–दर्शन के कार्यक्षेत्र, भाषा की स्वायत्ता व इसके आधार सहित अनेक बिंदुओं की स्पष्ट व्याख्या की। उनके अनुसार पश्चिमी दर्शन– परम्परा में भाषा–दर्शन एक बहुत अर्वाचीन विधा है। प्रमाणमीमांसा का कार्य हमारे ज्ञान की सीमाओं का रेखांकन करना, ज्ञान–प्राप्ति के हमारे साधनों का निर्धारण करना, ज्ञान–प्राप्ति की वैध–अवैध परिस्थितियों तथा निश्चयात्मक या संदिग्धात्मक ज्ञान प्रदान करने

वाले साधनों की पहचान करना है। तंत्रशास्त्र में भाषाशास्त्रीय विमर्श के प्रति अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए प्रो. शीतला प्रसाद उपाध्याय ने प्रतिपादित किया कि श्रवणयन्त्र, स्नायुसूत्र–समूह एवं अनुभूति–केन्द्र को अपेक्षानुसार धक्का लगने पर शब्द का ज्ञान होता है। इनके अतिरिक्त न्यूनाधिक मनः संयोग भी आवश्यक होता है। सृष्टि का प्रथम उपक्रम जिससे हुआ है उसे हम 'प्राथमिक स्पन्द' कहते हैं। भाषा–दर्शन के सम्बंध में प्रो. देवेन्द्र कुमार तिवारी ने इसकी पृष्ठभूमि स्पष्ट करते हुए विविध आयामों की विस्तार से चर्चा की तथा सांख्य, न्याय, पाश्चात्य दर्शनों के अनुसार भाषा के वैशिष्ट्य पर प्रकाश डाला।

अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. धर्मचंद्र जैन ने श्रवण–परम्परा में भाषातत्व–चिंतन पर अपने विचार प्रकट किये। आगम साहित्य को उद्धृत करते हुए उन्होंने बताया कि भाषा का स्वरूप, भाषा की उत्पत्ति, भाषा का आकार, भाषा की गति, भाषा के प्रकार, निर्दोष व्यवहार के योग्य भाषा आदि पर जैन आगमों में पर्याप्त विचार किया गया है। इनके अतिरिक्त शब्द, अर्थ बोध, श्रुतज्ञान से भाषा का सम्बंध, स्यात्पूर्वक भाषा–प्रयोग, नयवाद, निक्षेप आदि पर भी आगमों के साथ दार्शनिक ग्रंथों में चिन्तन हुआ है जो भारतीय भाषा–चिंतन में वैचारिक विशिष्टता एवं नूतनता का सन्निवेश करता है। इस सत्र का संचालन एवं धन्यवाद–ज्ञापन डॉ. जयन्त उपाध्याय द्वारा किया गया।

वेबिनार के दूसरे दिन (13 जनवरी 2021) का आरम्भ 'व्याकरणिक भाषा–चिंतन' पर केन्द्रित तृतीय अकादमिक सत्र के साथ हुआ। डॉ. बलराम शुक्ल ने प्राकृत और संस्कृत के पारस्परिक सम्बन्धों की चर्चा करते हुए संस्कृत व्याकरण की पूरी परम्परा पर प्रकाश डाला और भाषा–चिन्तन के क्षेत्र में प्राकृत के महत्त्व को रेखांकित किया। प्रो. जयप्रकाश त्रिपाठी ने व्याकरणिक भाषा–चिंतन में पाणिनि और अष्टाध्यायी के वैशिष्ट्य को निरूपित किया तथा कहा कि अष्टाध्यायी का प्रभाव किसी वेद विशेष तक सीमित न होकर सभी वैदिक संहिताओं तक था। प्रो. त्रिपाठी ने अष्टाध्यायी की वैज्ञानिकता को स्पष्ट करते हुए कहा कि तत्कालीन समाज में लेखन–सम्बन्धी अभावों को देखते हुए पाणिनि ने व्याकरण को स्मृतिगम्य बनाने के लिए सूत्र–शैली की सहायता ली है। प्रो. भगवतशरण शुक्ल ने महाभाष्य की भाषाशास्त्रीय शैली के विविध आयामों का विवेचन किया। उन्होंने पतंजलि के महाभाष्य को अन्य ग्रंथों के भाष्यों के लिए प्रतिमान के रूप में प्रतिस्थापित किया तथा भाषा–चिंतन में पतंजलि के योगदान पर प्रकाश डाला। प्रो. मिथिलेश चतुर्वेदी ने संस्कृत व्याकरण की परम्परा में भर्तृहरि के भाषा–दर्शन का विश्लेषण करते हुए बताया कि उन्होंने विश्व स्तर पर दर्शन एवं भाषाशास्त्र के अध्येताओं को बहुविध प्रभावित किया है। प्रो. गोपबन्धु मिश्र ने पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि को 'मुनित्रय' बताते हुए आचार्य कात्यायन के भाषातत्त्वविवेक की विस्तार से चर्चा की तथा कहा कि आचार्य कात्यायन शब्दार्थ–सम्बन्ध की नित्यता के पोषक हैं। वे प्रयोगधर्मी हैं किन्तु साधु शब्दों के ज्ञान को महत्व देते हैं।

गायत्री प्रसाद पाण्डेय ने शब्द, अर्थ और अध्यास के सन्दर्भ में बताया कि एक वस्तु में दूसरी वस्तु का ज्ञान ही अध्यास कहलाता है। मिथ्या ज्ञान के पीछे भी सत्य ही आधार होता है। अतः अध्यास के दो पक्ष हैं– सत्य और अनृत या मिथ्या। प्रो. बसन्त कुमार भट्ट ने अर्थबोध में स्फोट की अनिवार्यता की समीक्षा करते हुए कहा कि भाषा अभ्यास दो अलग कोटियों– प्रथम ध्वनि की दृष्टि से तथा द्वितीय अर्थाभिव्यक्ति की प्रक्रिया की दृष्टि से होता है। अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. रमेशचन्द्र पण्डा ने नागेश भट्ट के भाषा–चिंतन में योगदान की विवेचना की। उन्होंने कहा कि पाणिनि व्याकरण की परम्परा में नागेश भट्ट सर्वमान्य शब्दशास्त्री के रूप में प्रख्यात हैं। शब्दशास्त्र का नामान्तर व्याकरण है। पाणिनि व्याकरण में प्रक्रियाधारा, परिष्कारधारा एवं दर्शनधारा तीन सर्वविदित धाराएँ हैं। डॉ. अशोक नाथ त्रिपाठी ने इस सत्र के संचालन एवं धन्यवाद–ज्ञापन के दायित्व का निर्वहन किया।

वेबिनार के चतुर्थ अकादमिक सत्र का विषय था– 'काव्यशास्त्र में भाषा–चिंतन'। प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने शब्दवृत्तीय विमर्श के विभिन्न पक्षों की विशद विवेचना के साथ शब्दवृत्ति या शब्दव्यापार के सन्दर्भ में भारतीय चिंतन के वैशिष्ट्य को हिन्दी की कई कविताओं को उद्धृत करते हुए रेखांकित किया। ध्वनि सिद्धान्त, वक्रोक्ति और औचित्य सिद्धान्त का भाषा–चिंतन में महत्त्व प्रतिपादित करते हुए डॉ. श्याम सुन्दर दुबे ने तुलसीदास जी के उद्धरण के माध्यम से कहा– वाक् ज्ञान अत्यंत निपुन भव पार न पावे कोई। रीतिकालीन कवि केशवदास ने वाणी–वंदना में इस तथ्य की ओर संकेत किया था। उनके अनुसार वाणी की महिमा ब्रह्मा चार मुख से, शंकर पाँच मुख से तथा स्वामी कार्तिक छह मुख से कर रहे हैं, फिर भी वह नयी–नयी ही है। अलंकारवादी भाषादृष्टि की व्याख्या करते हुए प्रो. सदाशिव कुमार द्विवेदी का कहना था कि भाषागत अलंकारों के प्रयोग का प्रचलन वैदिक युग से प्राप्त होता है। वैदिक मन्त्रों में ऋषियों ने प्रकृति तथा जीवन से जुड़े अनेक पक्षों को लोकसामान्य तक प्रभावकारी विधि से पहुँचाने के लिए काव्यालंकारों को अपनाया। प्रो. रमेश कुमार पाण्डेय ने रसवाद और भाषिक विमर्श पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि काव्य भाषा का परिनिष्ठित स्वरूप है और रस उसकी आत्मा है। काव्य शरीर तथा रस शरीरी माना गया है। काव्यलक्षण के इस दर्शन में समग्र जीवन–दर्शन निहित है। प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने श्रीहर्ष, दण्डी, भामह, वामन, भोज, शारदातनय आदि के उद्धरणों से रीतिवादी परम्परा से भाषिक विमर्श के विविध आयामों को स्पष्ट किया। उन्होंने कहा कि काव्य का कोई ऐसा बिम्ब नहीं, जो लोकघटित न हो। इसी प्रकार सारे सिद्धान्त, सारे दार्शनिक प्रत्यय, सारे शास्त्रीय प्रकल्प लोकाश्रित होते हैं। अध्यक्षीय उद्बोधन में प्रो. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' ने प्राचीन भारतीय भाषा–चिंतन एवं आधुनिक पाश्चात्य भाषा–चितंन का एक गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया तथा इस पर एक तथ्यान्वेषी तथा तत्वाभिनिवेशी ग्रन्थ की आवश्यकता बताई। उनके अनुसार भारतीय भाषा–चिंतन की परम्परा पाश्चात्य की तुलना में कहीं अधिक समृद्ध है। भारतीय भाषा–परम्परा व्याकरण को अपरिहार्य विषय मानती है किन्तु पाश्चात्य भाषा–चेतना

व्याकरण में केवल रूप–संरचना और वाक्य–संरचना को ही विवेच्य मानती है। इस क्रम में उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों के अनेक तथ्य उद्धृत किये। डॉ. हरीश अरोड़ा ने इस सत्र का संचालन एवं धन्यवाद–ज्ञापन किया। दोनो सत्रों में विद्वानों का स्वागत डॉ. दयानिधि मिश्र, सचिव, विद्याश्री न्यास ने किया।

तीन दिवसीय राष्ट्रीय वेबिनार के तीसरे और अंतिम दिन का पाँचवाँ अकादमिक सत्र ''विद्यानिवास मिश्र स्मृति व्याख्यान'' के रूप में आयोजित हुआ। ''लोक का वैभव : अभिव्यक्ति और अनुभव'' जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर यह स्मृति व्याख्यान ख्याति लब्ध लोकविद्याविद डॉ. राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी (प्रख्यात भाषाविद्, हरियाणा) द्वारा प्रो. अच्युतानंद मिश्र, पूर्व कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय, की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि थे प्रख्यात साहित्यकार नर्मदाप्रसाद। अपने व्याख्यान में डॉ. चतुर्वेदी ने लोक के साहित्यिक और सांस्कृतिक वैभव के विभिन्न पक्षों को प्रकाशित किया। उन्होंने बताया कि लोकवार्ताएँ अपने विविध रूपाकार में सामान्य जन के साझे सामाजिक अनुभवों की एक सुदीर्घ परंपरा की सहज अभिव्यक्तियाँ हैं और उनका सारा सौंदर्य अपने अनुभवों की सच्चाई और अभिव्यक्ति की सादगी में निहित है। उन्होंने उन सारस्वत प्रयत्नों का भी विशद विश्लेषण किया जिन्हें पं. विद्यानिवास मिश्र जैसे भारतीय लोक की आत्मिक पहचान रखने वाले अध्येताओं ने फोकस्टडी की पश्चिमी परंपरा से भिन्न, विशिष्ट और भारत–भावित स्वरूप प्रदान किया। डॉ. चतुर्वेदी ने कहा की भारतीय संविधान की प्रस्तावना में ''हम भारत के लोग'' शब्द वास्तव में भारतीय लोकतंत्र की आत्मा है। भारत की लोक विधाएँ लुप्त नहीं हुई हैं बल्कि दृष्टि लुप्त हुई है। उन्होंने बताया कि पण्डित जी मेरे गुरु थे और लोक–संबंधी चिंतन को जगाने उठाने और प्रवृत्त करने में उनकी प्रेरणा निरंतर मेरे साथ रही, उनके स्मृति की छाया में हम लोक के वैभव का विमर्श कर रहे हैं। लोक की व्याप्ति कथा, कला और रीति–रिवाजों तक विस्तृत है। इसकी भाषिक और क्षेत्रीय विविधता का सौंदर्य और दीप्ति सांस्कृतिक चेतना को समृद्ध करती है।

विशिष्ट अतिथि डॉ. नर्मदा प्रसाद ने पंडित जी के कला–दृष्टि पर प्रकाश डाला और कहा कि वो कला ककी बारिकीयों से भली–भाँति परिचित थे, इसका अनुभव आनंद कुमारस्वामी की स्मृति में आयोजित कार्यक्रम से मुझे हुआ।

अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. अच्युतानंद मिश्र ने लोक की भारतीय अवधारणा के आलोक में लोकविद्या के उन आयामों की तरफ संकेत किए जो आज भी प्रासंगिक हैं और समकालीन परिस्थतियों में भी मानवीय संवेदनाओं को जिलाए–जगाए रखने के अचूक उपाय की तरह हैं। उन्होंने कहा कि जितना मैंने पण्डितजी को देखा है, वह लोक में ही विश्राम करते थे, लोक में ही विचरण करते थे, लोक में ही जीवित रहते थे। उनका सबकुछ लोक ही था। उनके संस्मरण लोक के उनके जीवन में प्रधानता को निरूपित करते हैं। वह शास्त्र और लोक दोनों के विद्वान थे, लेकिन कुल मिलाकर उनका जीवन लोकमय ही था क्योंकि शास्त्र भी आखिर

लोक में ही होता है। लोक का अर्थ होता है– सर्वसामान्य या सर्वसाधारण, लेकिन पण्डितजी का लोक–संस्कृति, सभ्यता, परम्परा का लोक था। आज के शहरों का जो लोक है वह समाज कहलाता है, वह पण्डितजी का लोक नहीं था, उनका लोक अपनी परम्पराओं, रीति–रिवाजों, पर्व–त्यौहारों से बँधा था, वह जनसामान्य से जुड़ा था।

प्रो. गिरीश्वर मिश्र, पूर्व कुलपति म.गां. अं. हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा ने धन्यवाद–ज्ञापन के क्रम में प्रस्तुत व्याख्यान के साथ ही इस तीन दिवसीय संगोष्ठी के विभिन्न अकादमिक सत्रों की सारस्वत उपलब्धियों की भी चर्चा की। उन्होंने आयोजन से जुड़े सभी सुधीजन और प्रतिभागियों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए इस विषय पर अनवरत विमर्श की आवश्यकता पर बल दिया। इस सत्र के संयोजन का दायित्व प्रो. अवधेश कुमार ने निभाया।

''भारत में भाषा–चिंतन की परंपराएँ'' जैसे गंभीर विषय पर पाँच सत्रों में चले इस गहन पांडित्यपूर्ण विमर्श ने, सुखद है कि छठे सत्र में एक काव्य–गोष्ठी के रूप में विराम लिया। यह काव्य–गोष्ठी मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध गीतकर श्री बुद्धिनाथ मिश्र के सान्निध्य में प्रख्यात साहित्यकार रमेश चंद्र शाह की अध्यक्षता में संपन्न हुई। काव्य–संध्या में सर्वश्री हरिराम द्विवेदी की माँ पर लिखी कविता से शुरू हुई। सर्वश्री गिरिधर करुण, रवींद्र श्रीवास्तव 'जुगानी भाई', अशोक द्विवेदी, आनंद संधिदूत, अनिरुद्ध त्रिपाठी 'अशेष', अशोक सिंह, वशिष्ठ अनूप, श्याम सुंदर दुबे, मंजुला चतुर्वेदी, सुरेंद्र वाजपेयी, शिव कुमार 'पराग', हिमांशु उपाध्याय, ओम धीरज, जितेन्द्र नाथ मिश्र, इन्द्र कुमार दीक्षित, रामानुज अस्थाना, सरोज पांडे, आरती स्मित, रचना शर्मा, वासुदेव ओबराय, जगदीश पंथी, अशोक सिंह 'घायल', ब्रजेन्द्र नारायण द्विवेदी, शिवशंकर सिंह एवं अन्य कवियों ने अपने काव्य–पाठ से इस काव्य–गोष्ठी को ऊँचाई प्रदान की और सहृदय श्रोताओं को बाँधे रखा। इस सत्र का संयोजन एवं संचालन प्रकाश उदय ने किया तथा धन्यवाद–ज्ञापन प्रो. अवधेश कुमार शुक्ल एवं डॉ. दयानिधि मिश्र ने किया।